आखर हिंदी पत्रिका; e-ISSN-2583-0597 खंड 6/अंक 2/जून 2026

Received: 22/06/2026; Revised: 23/06/2026; Accepted: 24/06/2026; Published: 28/06/2026

वीरेंद्र जैन द्वारा लिखित 'पार' आदिवासी उपन्यास में निहित रागात्मक संवेदना

[1]रामकृष्ण के. एस
सहायक प्राध्यापक
सरकारी प्रथम श्रेणी महाविद्यालय, सुल्या
दक्षिण कन्नड
मोबाईल – 9845392610
ईमेल -ramakrishnay86@gmail.com

[2]प्रो. सुमा टी. आर
प्राध्यापक , हिंदी अध्ययन विभाग
विश्वविद्याल कॉलेज, हम्पनकट्टा
मोबाईल – 8088545787
ईमेल – sumanraj06@gmail.com
मंगलूरु विश्वविद्यानिलय

[1]संदीप कुमार, [2]डॉ.आशुतोष कुमार, भ्रमरगीत-काव्य परंपरा में ज्ञान और भक्ति, आखर हिंदी पत्रिका, **खंड 6/अंक 2/जून 2026, (284 -290)**

This work is licensed under CC BY-NC 4.0

https://doi.org/10.5281/zenodo.21443912

अनुरूपी लेखक : [1]रामकृष्ण के. एस, सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग, सरकारी प्रथम श्रेणी महाविद्यालय, सुल्या, दक्षिण कन्नड
सह लेखक **[2]प्रो. सुमा टी. आर,** प्राध्यापक , हिंदी अध्ययन विभाग, विश्वविद्यालय कॉलेज, हम्पनकट्टा, मंगलूरु विश्वविद्यानिलय

शोध-सार: वीरेंद्र जैन का *'पार'* उपन्यास आदिवासी जीवन की यथार्थपरक प्रस्तुति करते हुए रागात्मक संवेदनाओं का व्यापक चित्रण करता है। उपन्यास में सुख, दुःख, भय, क्रोध, प्रेम, घृणा, आश्चर्य तथा लज्जा जैसी विविध मानवीय भावनाएँ आदिवासी समाज के संघर्षपूर्ण जीवन से जुड़कर अभिव्यक्त हुई हैं। लेखक ने पात्रों की मानसिक स्थितियों, सामाजिक शोषण, आर्थिक विषमताओं तथा मानवीय संबंधों को संवेदनात्मक दृष्टि से चित्रित किया है। इन संवेदनाओं के माध्यम से आदिवासी जीवन की पीड़ा, प्रेम, असुरक्षा, आत्मीयता और संघर्ष का सजीव चित्र सामने आता है। इस प्रकार *'पार'* रागात्मक संवेदना की दृष्टि से एक महत्वपूर्ण आदिवासी उपन्यास सिद्ध होता है।

बीज शब्द: आदिवासी, रागात्मक संवेदना, गरीबी

प्रस्तावना: मानव जीवन भावनाओं और संवेदनाओं का समुच्चय है। मनुष्य केवल बुद्धि से संचालित प्राणी नहीं है, बल्कि उसके व्यवहार, विचार और कर्मों पर उसकी भावनाओं का भी गहरा प्रभाव पड़ता है। साहित्य में इन भावनाओं की अभिव्यक्ति विभिन्न रूपों में होती है, जिनमें रागात्मक संवेदना का विशेष स्थान है। रागात्मक संवेदना मनुष्य के हृदय में उत्पन्न होने वाले प्रेम, स्नेह, करुणा, वात्सल्य, अनुराग, सहानुभूति तथा आत्मीयता जैसे भावों की अनुभूति है। यह संवेदना व्यक्ति को स्वयं से बाहर निकलकर दूसरों के सुख-दुःख से जोड़ती है तथा मानवीय संबंधों को सुदृढ़ बनाती है।

रागात्मक संवेदना समाज में प्रेम, सद्भाव और सहयोग की भावना को विकसित करती है। इसके अभाव में मनुष्य स्वार्थी और संवेदनहीन बन सकता है। वर्तमान भौतिकवादी युग में जहाँ मानवीय संबंधों में दूरी बढ़ रही है, वहाँ रागात्मक संवेदना सामाजिक समरसता और मानवीय मूल्यों की रक्षा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

यह संवेदना व्यक्ति में सहिष्णुता, उदारता, परोपकार और मानवता जैसे गुणों का विकास करती है। सामाजिक संघर्षों को कम करने तथा आपसी विश्वास को बढ़ाने में भी इसकी महत्वपूर्ण भूमिका है। वीरंदर जैन द्वारा लिखित पार उपन्यास में इन सारी समवेदनाओं को महसूस कर सकते हैं।

सुखात्मक संवेदना- सुखात्मक संवेदना मनुष्य के जीवन में आनंद, संतोष, प्रेम और प्रसन्नता जैसी सकारात्मक भावनाओं का अनुभव कराने वाली संवेदना है। यह व्यक्ति के मन को उत्साह, ऊर्जा और आशा से भर देती है। जब मनुष्य अपनी इच्छाओं की पूर्ति, प्रियजनों का स्नेह, सफलता की प्राप्ति अथवा प्रकृति की सुंदरता का आनंद लेता है, तब उसके भीतर सुखात्मक संवेदना उत्पन्न होती है। साहित्य में भी यह संवेदना महत्वपूर्ण स्थान रखती है, क्योंकि इसके माध्यम से जीवन के सुखद पक्षों और मानवीय भावनाओं की अभिव्यक्ति होती है। सुखात्मक संवेदना व्यक्ति को मानसिक शांति प्रदान कर जीवन को सार्थक और आनंदमय बनाती है।

वीरेंद्र जैन द्वारा लिखित 'पार' उपन्यास में सुखत्मक संवेदना बहुत कम देखने को मिलती है, फिर भी कहीं-कहीं सुखात्माक संवेदना को हम महसूस कर सकते हैं। शरीर सुख पाने के लिए मुइया मुखिया माई का आसन भी त्याग देती है। जीरोन छोड़ देती है, और अपने बच्चे को भी छोड़ देती है| इसलिए कहते हैं कि काम भावना को नियंत्रण में रखना इतना आसान नहीं है| उसके शरीर ने उसके मन को हरा दिया। उसके लिए शरीर सुख ही सबसे बड़ा सुख बन गया।बाद में अपने इस निर्णय पर पछताती भी है। काम भावना की तुलना में कर्तव्य भावना मुख्य होती है।

दुःखात्मक संवेदना- दुःखात्मक संवेदना मानव जीवन के उन अनुभवों और भावनाओं की अभिव्यक्ति है, जो पीड़ा, शोक, निराशा, वियोग, असफलता तथा संघर्ष से उत्पन्न होती हैं। यह संवेदना मनुष्य के हृदय की गहराइयों को स्पर्श करती है और उसे जीवन की कठोर वास्तविकताओं से परिचित कराती है। यह संवेदना मनुष्य में सहानुभूति और संवेदनशीलता का विकास भी करती है।

'पार' उपन्यास में गुनिया आदिवासियों की स्थिति के बारे में सोचता है कि वह अब शहर या गाँव नहीं जा पाएगा, क्योंकि उसके पास पहनने के लिए कपड़े नहीं है। बिना कपड़ों के वह जाएगा तो गाँववाले उसे स्वीकारेंगे नहीं। उसे मार भगाएँगे। वह यहाँ एक विडंबना उजागर करता है- "कोई भी अपनी दुकान के सामने ठहरने नहीं देता उसे। वे साव भी नहीं जो धरती पर लोट-लोटकर पूजा करते हैं नंगे साधू की, भगवान की। वे भी दुत्कार देते हैं गुनिया को। सौदा लेने-देने की बात तो दूर, उसे दूर से आता देख मुँह फेर लेते हैं। लठिया थाम लेते हैं हाथ में"।[1]

मास्साव की बेटी और रामदुलारे की पत्नी यशस्विनी गाँव में सेवा करने आई थी। उसके प्रति गाँववालों के व्यवहार को देखकर वह टूट जाती है, वह जिनके उद्धार के लिए गाँव आई थी, उन्हीं के हाथों से बहिष्कार होते देखकर उदास हो जाती है। "औरतों के उलाहनों, शिकवों, शिकायतों, मान्यताओं, धारणाओं से यशस्वनी भयभीत नहीं हुई, लेकिन सामाजिक बहिष्कार ने, उपेक्षा ने उसे तोड़ दिया"।[2] यहाँ यशस्विनी के मन के दुख की अनुभूति हमें होती है।

भयात्मक संवेदना- आदिवासी लोगों में भय की मात्रा बड़ी मात्रा में देखने को मिलती है। जैसे आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने कहा है कि अशिक्षितों में भय अधिक रहता है। ज़्यादातर आदिवासी अशिक्षित होने के कारण उनमें भय देखने को मिलता है।

भयात्मक संवेदना वह मनोभाव है जो किसी संकट, खतरे, अनिश्चितता या अप्रिय घटना की आशंका से उत्पन्न होता है। यह मानव की स्वाभाविक प्रतिक्रिया है, जो उसे सावधान और सतर्क बनाती है। साहित्य में भयात्मक संवेदना के माध्यम से जीवन की चुनौतियों और मानवीय मनःस्थिति का प्रभावी चित्रण किया जाता है।

मूसर खेरे के मुखिया ने जीरोन खेरे के मुखिया से कहा कि "कुछ बरस से हमरे खेरे के दिन अच्छे नहीं चल रहे हैं मुखियाजू। गौंड बब्बा खफा है कि जाने कोई ऊँच-नीच हो गई खेरे के किसी जन से या जनी से। किसी

और खेरे वाले ने जप-तप करवा दिया, कि रिद्धि -सिद्धि कर दी, कि खेरे को कील दिया, कि शाप दे दिया, कि मेटने का कौन भर लिया, खबर नहीं"।[3]

मूसर खेरे का मुखिया के मन में डर समाने काआ और भी एक कारण है। वह कहता है –"हर बार जो भी गिरोह आता, हमारी एक -दो जनीं, कि मौढियन को हाँक ले जाता। न हम कभी उनका कुछ बिगाड़ पाए, न उन्हें रोक पाए, न हटक पाए"।[4]

इनमें पूरी तरह से डर का माहौल देख सकते हैं। शारीरिक रूप से बलशाली होने पर भी अजनबी लोगों का सामना करने में अपने आपको असमर्थ पाते हैं आदिवासी लोग।

आदिवासियों में डर की मात्र इतनी बढ़ गई है कि "कुछ भी हासिल करवाने के लिए इन्हें तैयार करना सरल नहीं है। रांदूलरे अपनी पत्नी से उनकी स्थिति के बारे में बताते हुए कहता है –"जाने कितने युगों से इन्हें गुमराह किया जाता रहा है। इन्हें हमेशा ठगा गया। झूठे सपने दिखाए गए। झूठ की फसल बोई गई यहाँ हमेशा। उसे काटते-काटते ये भूल गए हैं कि कोई बीज ऐसा भी होता है जो सच की फसल भी दे सकता है। अभी आगे भी ऐसा ही होता रह सकता है यश।"[5]

क्रोधात्मक संवेदना- क्रोधात्मक संवेदना मानव मन की एक प्रबल भावनात्मक प्रतिक्रिया है, जो अन्याय, अपमान, असंतोष, शोषण अथवा किसी प्रतिकूल परिस्थिति के कारण उत्पन्न होती है। यह व्यक्ति के भीतर विरोध, प्रतिकार और असहमति की भावना को जन्म देती है। क्रोध केवल नकारात्मक भावना नहीं है, बल्कि कई बार यह अन्याय के विरुद्ध संघर्ष और परिवर्तन की प्रेरणा भी बनता है। साहित्य में क्रोधात्मक संवेदना के माध्यम से सामाजिक विसंगतियों, अत्याचारों और मानवीय संघर्षों का सशक्त चित्रण किया जाता है। यह संवेदना व्यक्ति के आंतरिक द्वंद्व तथा उसके व्यक्तित्व के विभिन्न पक्षों को उजागर करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

पीड़ित लोग अपने दर्द को ज्यादा देर तक छुपा नहीं सकते। उनके मन का आक्रोश बाहर निकल ही आता है। वे हिंसा पर भी उतर पड़ते हैं। इसके लिए मात्र वे ही कारण नहीं है। परिस्थिति उनको ऐसा करने में लाचार कर देती है। 'पार' उपन्यास में गुनिया मुखिया से कहता है "शहर में धोखा हुआ हमरे मर्दों के साथ। छल से छला घूरे साव ने। बल से छलता तो तब देखते। टेंटुआ न दबा देते तो राउत कहाना छोड़ देते"।[6]

प्रेमात्मक संवेदना- प्रेमात्मक संवेदना मानव हृदय की सबसे कोमल और मधुर अनुभूति है। यह स्नेह, अपनत्व, करुणा, त्याग और समर्पण जैसे भावों से परिपूर्ण होती है। प्रेम व्यक्ति को दूसरों के सुख-दुःख से जोड़ता है तथा मानवीय संबंधों को सुदृढ़ बनाता है। साहित्य में प्रेमात्मक संवेदना के माध्यम से मनुष्य की भावनाओं, रिश्तों और जीवन के सौंदर्य का प्रभावशाली चित्रण किया जाता है। यह संवेदना मानव जीवन को अर्थ, आनंद और संवेदनशीलता प्रदान करती है।

'पार' उपन्यास में उपन्यासकार मुइया के मन की स्थिति के बारे में बताते हुए कहते हैं- मुइया का मन चंचल होने लगा| शरीर सुख चाहने लगा। पति का प्रेम और स्नेह चाहने लगा। मुइया सोचने लगी कि मेरे ऊपर

इस तरह के प्रतिबंध लगाने से पहले मुखिया ने मेरे बारे में क्यों नहीं सोचा? वह कहती है- "मोरी मंशा, मोरी उमर, मोरी मति, मोरी गति पर काहे विचार न किया मुखिया ने!" इन वाक्यों के माध्यम से मुइया मानवाधिकार का प्रश्न भी उठा रही है। यह भावना हर एक व्यक्ति में रहती ही है।

घृणात्मक संवेदना- घृणात्मक संवेदना वह भावना है, जो किसी व्यक्ति, वस्तु, विचार या कार्य के प्रति अस्वीकार, तिरस्कार अथवा विरोध के रूप में उत्पन्न होती है। यह संवेदना प्रायः अनैतिकता, अन्याय, छल, शोषण और सामाजिक बुराइयों के प्रति विकसित होती है। साहित्य में घृणात्मक संवेदना के माध्यम से समाज की विकृतियों और मानवीय दोषों को उजागर किया जाता है। यह संवेदना व्यक्ति को बुराइयों से दूर रहने तथा नैतिक मूल्यों के प्रति जागरूक बनने की प्रेरणा प्रदान करती है।

सचमुच में मानव जाति के लिए यह लज्जा का विषय है। 'पार' उपन्यास में एक जगह हम देखते हैं कि घूरे साव स्त्रियों का व्यापार करने लगता है। स्त्री को बेचने और खरीदने के धंधे के बारे में घूरे साव जान लेते हैं। घूरे साव को खबर लगी कि "इस इलाके में ऐसे ढेरों ज़मींदार, रईस, तालुकेदार, असरदार अफसर और अन्य बड़े कारोबारी लोग जो औरतें खरीदते हैं। उनके आदमी गाँव-देहात से खेरे-टपरे से औरतें उठाकर, फुसलाकर, हाँककर लाते हैं। उस औरत की ओर से कहलवाया जाता है कि वह इस आदमी के साथ अपना घर बसाना चाहती है। अपनी मर्ज़ी से। किसी की ज़ोर-जबरदस्ती से नहीं"।[7]

घूरे साव के व्यक्तित्व के बारे में बताते समय हल्के साव ने माते(इमरत सिंह उर्फ अमृत सिंह यादव) से कहा कि "अरे, वह भगवान से डरता होता तो नून, तेल, कत्था, लत्ता, बीज, बत्ती बेचने की जगह राउतनें बेचने का धंधा करता भला। चमार भी मरे पशु की चमड़ी बेचता है। यह तो ज़िंदा हाड़ चमड़ी का धंधा करता रहा। जिसने कभी माँ समान, बहन समान, बेटी समान औरत जात को एक बिकाऊ माल से ज़्यादा नहीं समझा, वह निर्जीव भगवान को क्या लेखेगा भला"। परिवार के सदस्यों में ही घूरे साव के व्यवहार के प्रति घृणा दिखती है।

घूरे साव नाम का भी मैला, चाम का भी मैला और काम का भी मैला। घिनौना। जघन्य। "राउतों को जड़ी-बूटियाँ महँगे दामों में खरीदने का प्रलोभन देकर डाँग में भटकने को भेजने लगा। उनके जाते ही टपरा में बैठकर राउतनों को बहलाता-फुसलाता। नित नई चीजें भेंट करता। चीजें देने के बहाने राउतनों को छूता। इस्तेमाल करने का ढंग बताने के बहाने उनके अंगों को सहलाता। भरमाता"।[8]

साव की जीवन शैली के बारे में बताते हुए लेखक कहते हैं – "गरीब किसानों, काछी, सलैया, ढीमर ,बसोर, चमार, लुहार, बढ़ई कि राउतों की तरह केवल पेट भर लेना ही जीवन नहीं है उनकी नज़र में"।[9] इसमें आदिवासियों की जीवन दशा का परिचय मिलता है और साथ ही साथ घूरे साव के व्यक्तित्व का परिचय भी मिलता है।

आश्चर्यात्मक संवेदना- आश्चर्यात्मक संवेदना मानव मन की वह विशिष्ट भावात्मक अवस्था है, जो किसी अनपेक्षित, अद्‌भुत, विलक्षण अथवा असामान्य घटना, दृश्य या अनुभव के संपर्क में आने पर उत्पन्न होती है। यह संवेदना व्यक्ति के मन में जिज्ञासा, कौतूहल और विस्मय की भावना जगाती है। साहित्य में इसका

महत्वपूर्ण स्थान है, क्योंकि इसके माध्यम से लेखक पाठकों के मन में नवीनता और रोमांच का संचार करता है। यह संवेदना ज्ञान-विस्तार, कल्पनाशक्ति और चिंतन को भी प्रोत्साहित करती है।

रामदुलारे के जन्म से संबंधित छिपे रहस्य को मास्साव बताते हैं- "तू कुँवारी माँ का जाया है। तेरा बाप है कैलाश महाराज। माते के कहने पर निपूती देवी गोराबाई ने तुझे अपनाया है। मैंने तुझे नाम दिया था रामदुलारे। गोराबाई ने तेरी माँ की मर्यादा बचाई" अक्कल फुआ ही है तेरी असली माँ।[10] बातें सुनकर रामदुलारे की आँखें खुली की खुली रह गईं।

लज्जात्मक संवेदना- लज्जात्मक संवेदना मानव मन की एक महत्वपूर्ण भावनात्मक अवस्था है, जो किसी अनुचित कार्य, सामाजिक मर्यादा के उल्लंघन, असफलता अथवा आत्मग्लानि के कारण उत्पन्न होती है। यह व्यक्ति को अपने आचरण और व्यवहार के प्रति सजग बनाती है। लज्जा केवल संकोच की भावना नहीं है, बल्कि यह नैतिक चेतना और आत्ममूल्यांकन का भी प्रतीक है।

'पार' उपन्यास में मुइया की मनःस्थिति के बारे में बताते हैं कि मुइया अपने मन को नियंत्रण में नहीं रख पाई। इसमें उसकी कोई गलती भी नहीं है| लेखक कहते हैं - "देह के आगे हारी मुइया अब सब दिन उस कुघडी को कोसती है, जब उससे वह चूक हुई थी|" इसमें मुइया की लज्जात्मक संवेदना प्रकट होती है| जब मुइया ने एक बच्चे को जन्म दिया तो मुखिया ने उसे अगला गुनिया घोषित किया। गुनिया का मतलब अगला मुखिया बनेगा मुइया का बेटा। जब मुइया ने यह बात सुनी तो बहुत खुश हो गई, लेकिन एक शर्त भी थी| जो भी गुनिया की माँ बनेगी उसे अपने शरीर और मन पर नियंत्रण रखना अनिवार्य था| यह काम मुइया से नहीं हो पाया, इसलिए वह आज पूरी तरह से लज्जित है।

निष्कर्ष: अंततः कहा जा सकता है कि वीरेंद्र जैन का *'पार'* उपन्यास आदिवासी समाज के जीवन-संघर्षों और मानवीय भावनाओं का सशक्त दस्तावेज है। उपन्यास में रागात्मक संवेदना के विविध रूपों का प्रभावी एवं स्वाभाविक चित्रण हुआ है, जो पाठक को पात्रों के सुख-दुःख और संघर्षों से जोड़ देता है। लेखक ने आदिवासी समाज की उपेक्षा, शोषण और मानवीय संबंधों की गहराई को संवेदनात्मक स्तर पर अभिव्यक्त किया है। यही कारण है कि यह उपन्यास केवल सामाजिक यथार्थ का चित्रण नहीं करता, बल्कि मानवीय मूल्यों, सहानुभूति और संवेदनशीलता को भी स्थापित करता है।

संदर्भ ग्रंथ:

1) वीरेंद्र, जैन, पार, उपन्यास, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, हार्ड बैक चतुर्थ संस्करण 2022
2) मीणा, गंगा सहाय, आदिवासी और हिंदी उपन्यास, अनन्य प्रकाशन, दिल्ली 2018

****

[1]वीरेंद्र, जैन, पार, उपन्यास, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, हार्ड बैक चतुर्थ संस्करण 2022,पृ.सं 146

[2]वीरेंद्र, जैन, पार, उपन्यास, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, हार्ड बैक चतुर्थ संस्करण 2022,पृ.सं 16

[3] वीरेंद्र, जैन, पार, उपन्यास, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, हार्ड बैक चतुर्थ संस्करण 2022,पृ.सं 12

[4] वीरेंद्र, जैन, पार, उपन्यास, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, हार्ड बैक चतुर्थ संस्करण 2022,पृ.सं 12

[5] वीरेंद्र, जैन, पार, उपन्यास, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, हार्ड बैक चतुर्थ संस्करण 2022,पृ.सं 162

[6] वीरेंद्र, जैन, पार, उपन्यास, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, हार्ड बैक चतुर्थ संस्करण 2022,पृ.सं 78

[7] वीरेंद्र, जैन, पार, उपन्यास, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, हार्ड बैक चतुर्थ संस्करण 2022,पृ.सं 64

[8] वीरेंद्र, जैन, पार, उपन्यास, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, हार्ड बैक चतुर्थ संस्करण 2022,पृ.सं 66

[9] वीरेंद्र, जैन, पार, उपन्यास, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, हार्ड बैक चतुर्थ संस्करण 2022,पृ.सं 61

[10] वीरेंद्र, जैन, पार, उपन्यास, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, हार्ड बैक चतुर्थ संस्करण 2022,पृ.सं 111

****